शोध मंथन, Vol. –VIII, No. 1, 2017 ISSN: (P): 0976-5255, (e): 2454-339X
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
3.8942

शोध मंथन

आधुनिक संस्कृति एवं सभ्यता में श्रीमद्भगवद्गीता की उपयोगिता

डॉ. नलिनी श्रीवास्तव
स्नातक शिक्षक
विभाग संस्कृत
केन्द्रिय विद्यालय बचेलीए, दंतेवाड़ा
छत्तीसगढ़
Email-nsriva1979@gmail.com

आधुनिक युग में श्रीमद्भगवद्गीता की उपयोगिता चर्चा करना वस्तुतः निरर्थक एवं अप्रासंगिक प्रतीत होता है । आज से सहस्रों वर्ष पूर्व उपदेशित गीता का सम्बन्ध व्यक्ति ; अर्जुनद्ध से था जिसका उद्देश्य किसी एक विशिष्ट समस्या का समाधान करना था। श्रीमद्भगवद्गीता एक ऐसा हिन्दू धर्म ग्रन्थ है जिसमें ईश्वर जीव एवं जगत् विषयक प्रश्नों की चर्चा की गई है जिसका मनुष्य की वर्तमान समस्याओं से क्या कोई सम्बन्ध होगा ? इस प्रकार विषय वा समय दोनों ही दृष्टियों से गीता को क्या अनुपयोगी कहा जा सकता है और इसका कर्म योग भी क्या अव्यावहारिक प्रतीत होता है? आज जहॉ विश्व शान्ति की पहल कर रहा है संसार में शान्ति स्थापना एक महत्व पूर्ण कार्य है वहॉ युद्ध जैसे अशान्तिकारक क्रूर कर्म का उपदेश देने वाली गीता कैसे उपयोगी हो सकती है इन तर्कों को प्रस्तुत करते हुए आज के युग में गीता को कुछ मूढमति मनुष्य अनुपयोगी तथा अप्रसांगिक ग्रन्थ कह सकते हैं परन्तु यदि गीता के सिद्धान्तों का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करें तो ये धारणाएं निर्मूल सिद्ध होती हैं।

किसी भी धर्म का सम्बन्ध मनुष्य के इहलौकिक जीवन से नहीं होता। हमारे देश में धर्म की जो मान्यता है वह महर्षि कणाद की धर्म सम्बन्धी परिभाषा से अधिक स्पष्ट होती है–

यतोऽभ्युदय निःश्रेयस्सिद्धिः स धर्मः ।। वैशेषिक सूत्र–1/1/2

अर्थात् लोक तथा परलोक दानों की सिद्धि धर्म का प्रयोजन है। और दुख से मुक्ति तथा सुख प्राप्ति तो सदा मानव मात्र का उद्देश्य रहा है।

भारतीय समाज धर्म की नीव पर रखी गई वह इमारत है जिसकी सम्पूर्ण व्यवस्था धम्र पर आश्रित है। इस व्यवस्था में आध्यात्मिकता अथवा पारलौकिकता तथा सांसारिकता अथवा इहलौकिकता अविभाज्य है । आध्यात्मिकता हमे ऐसी दृष्टि प्रदान करती है जिसका प्रयोग संसार के कल्याण के लिए होता है आध्यात्मिकता से पूर्ण श्रीमद्भगवद्गीता के कर्म योग का भी लक्ष्य लोक संग्रह या लोक कल्याण ही है । इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता का सम्बन्ध सांसारिकता से है।

आज भ्रातृत्व की भावना के अभाव में व्यक्ति एक दूसरे के खून का प्यासा होता है कब युद्ध छिड़ जाय इसके विषय मेंकुछ नही कहा जा सकता है। अपने बचाव के लिये आज के मानव ने ऐसे ऐसे विध्वंसक अस्त्र शस्त्रों का निर्माण किया है जिनके द्वारा क्षण मात्र में सम्पूर्ण मानव जाति का विनाश सम्भव है। आज आवश्यकता है मानव सभ्यता तथा संस्कृति की रक्षाकी। श्रीमद्भगवद्गीता ने अर्जुन को युद्ध का उपदेश तो दिया परन्तु इससे यह सिद्ध नही होता कि गीता हमें युद्ध करने का उपदेश देती है। श्रीमद्भगवद्गीता तो अमर शान्ति का उपदेश देती है, क्योंकि युद्ध जैसे निन्दनीय क्रूर कर्म को भी मोक्ष या शान्ति का हेतु माना है यहॉ युद्ध को स्वर्ग का द्वार बताया गया है–

ISSN: (P): 0976-5255, (e): 2454-339X
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
3.8942

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपव्तम् ।
———————— युद्धमीदृशम् ।।;श्रीमद्भगवद्गीता 2/32द्ध युद्ध इस प्रकार का खुला हुआ स्वर्ग का द्वार है जो स्वयं प्राप्त होता है श्रीमद्भगवद्गीता का उद्देश्य मनुष्य मात्र का कल्याण है, क्योंकि युद्ध हो या शान्ति उसके मूल में मनुष्य ही है । अतः शान्ति के निमित्त भी युद्ध अनिवार्य हो सकता है। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव स्वरूप (जहॉ जीवन को धर्म से प्रथक रखा गया है) आज सारे संसार में दूसरे की धन सम्पत्ति छल बल से ताकत से हड़पने की प्रतियोगिता हो रही है आज संसार में ऐसे व्यक्ति उपस्थित है जो स्वार्थ सिद्धि हेतु दूसरे का अनिष्ट करने से नही चूकते इन सबको सन्मार्ग धर्म के द्वारा गीता में प्राप्त होता है ।

श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार किसी धर्म के बाह्य स्वरूप तथा फल से उसका नैतिक मूल्यांकन नही किया जा सकता । कोई भी कर्म कर्तव्य है या अकर्तव्य यह उसकी परिस्थितियों पर निर्भ्सर करता हैजब वह सम्पादित किया गया है कोई कर्म एक परिस्थिति में कर्तव्य तथा अन्य में कर्तव्य हो ऐसा सम्भव है । भगवान नें अर्जन को युद्ध के लिये प्रेरित किया , यह उचित था या अनुचित यह निर्णय तो तत्कालीन परिस्थितियों के आलोक में ही किया जाना चाहिये जिसका वर्णन महाभारत में प्राप्त होता है यों तो निष्काम कर्म योग अव्यावहारिक प्रतीत होता है क्योकि कर्म करना और फल की चिन्ता न करना मानव की प्रवृत्ति के विपरीत असम्भव लगता है और इसके लिये शुद्ध बुद्धि की आवश्यकता है । इस प्रकार शुद्ध बुद्धि से ही निष्काम कर्म योग सम्भव है तभी पुरुष मोह स्वार्थ से निवृत्त हो कर प्रेम का प्रसार कर सकता है।

श्रीमद्भगवद्गीता कर्मो का विभाजन शुभ अशुभ रूप में नही करती है क्योकि ऐसा करने पर दया ,दान ,क्षमा , उपकार अहिंसा सत्य आदि के अतिरिक्त सभी कर्म अशुभ माने जाने लगेंगे । परन्तु गीता में उपदेशित नीति की यह विशेषता है कि यह कर्ता की बुद्धि को विशेष महत्त्व देती है तथा मानव के आत्मसंयम , इन्द्रिय निग्रह आदि को शुद्ध बुद्धि के निमित्त माना गया है। नैतिक आदर्श की इस पराकाष्ठा को ही जीवन का सर्वोत्तम आदर्श माना गया है वहॉ परिस्थितियों और कर्मो के शुभाशुभ बाह्य स्वरूप का कोई महत्व नहीं हो सकता। इसलिए युद्ध उचित है या नहीं यह आवश्यक नहीं है बल्कि आवश्यक प्रश्न कर्ता की बुद्धि शुद्धि है जिसके द्वारा मनुष्य को कर्तव्य का शुद्ध ज्ञान हो पाता है । कानूनन भी साधारणतः बुद्धि की शुद्धता को ही किसी कर्म के नैतिक मूल्यांकन में महत्व देते हैं। मूल प्रश्न मानव प्रकृति का है जिसे गीता मानव समस्याओं का मूल कारण मानती है । इस प्रकार गीता में सामाजिक आर्थिक समसयाएं भी गौण होकर मानव समस्याओं का समाधान मुख्य है जिसका समाधान होने पर सभी समस्याओं का निवारण स्वयमेव हो जाता है।

वर्तमान युग में व्यक्ति का कोई महत्व नही है । व्यक्ति को उचित महत्व न देने के कारण ही समाज में असन्तुलन हो गया है क्योंकि श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार व्यक्ति अत्यन्त महत्व पूर्ण है , कारण कि पुरुष प्रकृति के समान ही अनादि और नित्य है । श्रीमद्भगवद्गीता पुरुष को न ही ब्रह्म का विकार मानती है न ही आध्यासिक । इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता व्यक्ति के ऊपर समाज को महत्व नही देती है क्योंकि समाज सभी प्रकार के व्यक्तियों के हितों के लिये है न कि उसके हितों के हनन के लिये । यह मानते है कि मनुष्य अपने आप में पूर्ण नही होता उसको पूर्णता समाज से ही प्राप्त होती है तथापि व्यक्ति के अस्तित्व,उसके व्यक्तित्व तथा अभिव्यक्ति की रक्षा करना भी समाज का कर्तव्य है क्योकि समाज भी व्यक्ति की ही रचना है। व्यक्ति के गुणों का पूर्ण विकास करने से समाज की समस्या स्वयं हल हो जाती है तथा व्यक्ति व समाज का अन्तर समाप्त हो जाता हैं यदि किसी सामाजिक संस्था से व्यक्ति के हितों की रक्षा न हो बल्कि उसका शोष्ण किया जाये तो वैसी सामाजिक संस्थाों का विघटन करना व्यक्ति का कर्तव्य बन जाता है।

आज के औद्योगिक युग में श्रीमद्भगवद्गीता का निष्काम कर्मयोग अत्यन्त प्रासांगिक है । व्यक्ति का व्यक्ति से समाज का समाज से अन्यत्र क्षेत्रों में भी द्वन्द्व विद्यमान है । श्रीमद्भगवद्गीता का कर्मयोग अधिकार की अपेक्षा कर्तव्य पर अधिक ध्यान देने का संदेश देता है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।। ;श्रीमद्भगवद्गीता 2/47द्ध

ISSN: (P): 0976-5255, (e): 2454-339X
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
3.8942

अर्थात् तेरा कर्म करने में ही अधिकार है , उसके फलों में नही इसलिए तू कर्मों के फल का हेतु मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी आसक्ति न हो ।

इसका तात्पर्य यह नहीं कि अधिकार तथा कर्तव्य प्रथक् प्रथक् हैं या कर्म निरुद्देश्य किया जाय । श्रीमद्भगवद्गीता के कर्मयोग का तात्पर्य यह नही है कि हम पशुओं की भांति निष्प्रयोजन कर्म में प्रवृत्त रहें। यदि कोई लाभ न हो तो कर्म करने का औचित्य नही रह जाता है श्रीमद्भगवद्गीता यह नही कहती कि हम कामनाओं को त्याग दें भगवान नें स्वयं कहा है किवे स्वयं धर्म के अनुकूल अर्थत शास्त्र के अनुकूल काम है–

धर्मविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि । ;श्रीमद्भगवद्गीता 7/11द्ध

इस प्रकार गीता का निष्काम कर्मयोग हमें समाज में रह कर कर्मयोग अर्थात कर्म की बुद्धि से कर्म करने का आदेश देता है कर्म के समय फल का ध्यान देने से कर्म का सम्पादन सफलता पूर्वक नहीं हो पाता है तथा हम ऐसे में लाभ की आशा नही कर सकते इस प्रकार लाभ प्राप्त करने हेतु हम कर्मके फल की आशा का त्याग करें–

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर । ;श्रीमद्भगवद्गीता 3/19द्ध

अर्थात इसलिए तू आसक्ति रहित होकर सदा कर्तव्य कर्म को भली भांति करता रह ।

स्वार्थ सिद्धि हेतु निष्काम कर्म सम्पादन के समबन्ध में गीता में जनक आदि का उदाहरण दिया गया है–

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ।।
लोक संग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि ।। ;श्रीमद्भगवद्गीता 3/20द्ध

अर्थात जनकादि ज्ञानीजन भी आसक्ति रहित कर्म द्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त हुए थे । इसलिए तथा लोक संग्रह को देखते हुए भी तू कर्म करने के योग्य है अर्थात तुझे कर्म करना ही उचित है ं इस प्रकार निष्काम कर्म योग से कर्तव्य व अधिकार की समस्या का समाधान हो जाता है।

वर्तमान समय में लोग वर्णव्यवस्था को लोग आपसी भेद भाव का कारण मात्र मानते हैं जबकि श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णव्यवस्था का समर्थन श्रमविभाजन के उद्देश्य से किया गया है । योग्यता क्षमता के आधार पर चारों वर्णों की व्यवस्था की गई है। इसमें ब्राह्मण ,क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के बीच कोई भेदभाव नहीं बल्कि योग्यतानुसार कर्म विभाजन होता है । एक ही घर में विभिन्न वर्णों के लोग साथ–साथ निवास करते है इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता श्रमविभाजन का आधार है कौन नही जानता कि रैदास के नाम से प्रसिद्ध जूतासीने वाला भक्त व ज्ञानी समझा जाता रहा है। परन्तु स्वार्थ के वशीभूत भारतीय नेता सामाजिक ज्ञान के अभाव में भेदभाव उत्पन्न करते हुए अपना उल्लू सीधा करते है । इस ओर उनका ध्यान नहीं जाता कि हिन्दू समाज में शूद्रों को भी प्राचीन काल से ही आदरणीय स्थान प्राप्त था व्यास तथा संजय इसके उदाहरण हैं । गीता में कहा गया है कि अपना कर्म श्रेष्ठतापूर्वक करना चाहिए चाहें वह बिना गुण का ही हो वह दूसरे के कर्म से कही श्रेष्ठ है–

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।।
स्वभाव नियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति कल्बिषम्।।;श्रीमद्भगवद्गीता 18/47द्ध

अच्छी प्रकार से आचरण किये गये दूसरे के धर्म से गुणरहित भी अपना धर्म श्रेष्ठ है, क्योंकि स्वभाव से नियत किये गये स्वधर्मरूप कर्म को करता हुआ मनुष्य पाप को नही प्राप्त होता है। इसी कारण इतने बड़े याद्धा होने पर भी भगवान श्री कृष्ण ने महाभारत यु0 में अर्जुन के सारथी का कार्य किया क्योंकि गीता में कहा गया है कि –

स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मो भयावहः ।। ;श्रीमद्भगवद्गीता 3/35द्ध

अर्थात् अपने धर्म में तो मरना भी कल्याण कारक है और दूसरे का धर्म भय देने वाला है।

इस प्रकार यदि श्रमविभाजन के लिए वर्णव्यवस्था का पालन करते हुए यदि अपने कर्तव्य पर ध्ययन देंगे तो भ्रातृत्व की भावना का विकास होगा तथा समाज काभी पूर्ण तथा स्वस्थ विकास होगा ।

जब जब लोग कर्म पथ से भ्रमित हुए है तब तब श्रीमद्भगवद्गीता ने हमें मार्ग दर्शन प्रदान किया है कर्म में प्रवृत्त कराने वाली गीता के तत्व ज्ञान के अतिरिक्त और कोई उपाय ही नही है । यही कारण है कि विदेशों में भी वेदान्त के तत्वों को आदर प्रदान किया जाता है परन्तू भारत ; जो इसके उपदेशों की जन्म भूमि रही हैद्ध में न तो शिक्षण संस्थाओ में ,न औद्योगिक प्रतिष्ठानों में , न प्रशासनिक

ISSN: (P): 0976-5255, (e): 2454-339X
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
3.8942

कार्यालयों में , और न अन्य संसथाओं में ही निष्काम कर्म योग की भावना है। हमारे राजनेताओं ने तो कभी सोचा भी नही होगा कि गीता का राजनीति में कोई महत्तव हो सकता है जबकि ये उस महाभारत का ह्रदय जो वास्तव में राजनीति ही है इस प्रकार राजनीति में भी निष्काम कर्मयोग का महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

आज आवश्यकता है कि हमारे राजनेता गीता से प्राप्त विचारों का प्रचार प्रसार शिक्षा के माध्यम से करें । परन्तु कष्ट का विषय है कि लोग छल, पाखण्ड, दम्भ आदि के माध्यम से सामान्य व्यकित के जीवन को कष्टमय बना देते हैं वोट की रजनीति के कारण श्रीमद्भगवद्गीता के विचारो को सामान्य जनता के जीवन का अंश नही बनने देते और धर्म निरपेक्षता के नाम पर धार्मिक और नैतिक आदर्शो को शिक्षा से प्रथक् रखते है। विचारों का व्यक्ति के मानस पर अमिट प्रभाव होता है आवश्यकता है कि इन विचारों का व्यक्ति के मानस पटल में प्रवेश कराया जाय तथा उसके अनुकूल ह्रदय को बनाने का अवसर दिया जाय पर उस देश में जहॉ गीता का उपदेश हुआ तथा श्री कृष्ण जैसे विचारक हुए वहॉ भी यह समभव नही हुआ ।

यदि राजनेताओं ने सत्ताधारियों ने श्रीमद्भगवद्गीता के विचारों को हमारे वर्तमान जीवन में किसी भी प्रकार उपयोगी माना तो भारत ही नही समसत विश्व का कल्यान सम्भव है और तभी भगवान द्वारा गीता में दिए गये शान्ति, एकता, तथा कर्मनिष्ठा के उपदेश सही माने में उपयोगी सिद्ध होंगे।